राजस्थान जैन चित्रकला : कुछ अप्रकाशित साक्ष्य

☐ श्री ब्रजमोहनसिंह परमार
अधीक्षक, कला सर्वेक्षण,
पुरातत्त्व व संग्रहालय विभाग, जोधपुर (राज०)

राजस्थान में जैन धर्म का प्रचार ईसा पूर्व में ही हो चुका था, परन्तु कलात्मक साक्ष्यों की प्राप्ति इस क्षेत्र में ईस्वी सन् की ६-७वीं शताब्दियों से पूर्व की अब तक नहीं हुई है। ६-७वीं शती से लेकर ९वीं शती तक जैन कला के साक्ष्य कांस्य[1] और प्रस्तर प्रतिमाओं में सीमित स्थानों से ही मिले हैं, परन्तु बाद में यह स्थिति नहीं रहती। एक तो यह कि राजस्थान के चारों कोनों में अनेक स्थानों से विभिन्न तीर्थंकरों और जैन मतों के अन्य देवी-देवताओं की प्रतिमा व उनकी प्रतिष्ठा हेतु जिनालयों के निर्माण के उदाहरण पिण्डवाड़ा-वसन्तगढ़, भीनमाल, देलवाड़ा, ओसियाँ, लोद्रवा, जैसलमेर, चित्तौड़, आहाड़ (उदयपुर), केशवराय पाटन आदि स्थानों से मिलने लगते हैं, दूसरी बात यह है कि प्रस्तर कांस्य प्रतिमाओं के अतिरिक्त जैन कला की अवतारणा, ताड़पत्रों, काष्ठपट्टिकाओं और कागज पर होने लगती है। १४-१५वीं शती और कुछ बाद की इस जैन कला को कुछ विद्वानों ने अपभ्रंश शैली और पश्चिमी भारतीय कला शैली नाम दिया है। यहाँ इन पंक्तियों में जैन कला के शोधकर्त्ताओं की जानकारी और अध्ययन हेतु ऐसे ही कुछ अद्यावधि अप्रकाशित साक्ष्यों पर प्रकाश डाला जा रहा है।

चित्रित काष्ठ फलक

चित्र संख्या १ व २ के काष्ठफलक या पट्टिकायें जिनदत्तसूरि के जैसलमेर स्थित[2] प्रसिद्ध ग्रंथ भण्डार में संग्रहीत हैं। इनके दोनों ओर लाख के रंगों के माध्यम से चित्र बने हैं। वास्तव में इनका प्रयोग ताड़पत्रों या कागज के हस्तलिखित ग्रंथों को सुरक्षित ढंग से रखने के लिए किया जाता रहा होगा। इन पर बने चित्र जैन धर्म से सम्बन्धित हैं। इनमें से एक पटली या पट्टिका कला की दृष्टि से बड़ी ही महत्त्वपूर्ण है, जिसमें २२वें तीर्थंकर नेमिनाथ की पर्यंकशायी माता शिवा द्वारा चौदह मांगलिक स्वप्नों को देखे जाने, हरिणगमेसिन-इन्द्र के चित्र चित्रित हैं। इनके अतिरिक्त रथारूढ और केशलुंचन करते नेमिनाथजी के चित्र भी क्रमशः इस पर अंकित हैं। दूसरी ओर पटली को लाल, पीले और काले शोख रंगों द्वारा कमल-लता के आवर्तनों के मध्य कुमारिका, गज, शार्दूल और हंस-मिथुनों का बड़ा ही सुन्दर चित्रण है।

कालक्रमानुसार इन पटलियों के चित्र १३-१५वीं शताब्दी के प्रतीत होते हैं।

चित्रित कल्पसूत्र

केन्द्रीय संग्रहालय, जयपुर में संग्रहीत यह कल्पसूत्र वि० सं० १५४७ का है। इसका वर्ण्य विषय महावीर स्वामी, पार्श्वनाथ और अरिष्टनेमि (नेमिनाथ) तथा इनके पंचकल्याणकों से सम्बन्धित हैं। कुल मिलाकर ९० पन्नों (२६×११ से० मी०) वाली इस प्रति में ३३ चित्र (११×७-८ से० मी०) हैं। इन चित्रों के विषय बताने से पूर्व यहाँ इस कल्पसूत्र के प्रशस्ति पत्र का मूल-पाठ देना उपयुक्त होगा—

---

१. स्टडीज इन जैन आर्ट (यू० पी० शाह) वाराणसी, १९५५, पृ० २७-३०
२. मार्ग, भाग ४, सं० २ पृ० ३७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संवत् १५४७ वर्षे वैशाख सुदि ७ शिन् म० आकालखितं ॥५॥ शुभंभवतु ॥छ॥ ॥छ॥ ॥छ॥ ॥छ॥ ॥छ॥

उपर्युक्त पाठ से स्पष्ट है कि इस कल्पसूत्र की लिपि देवनागरी है परन्तु इससे यह ज्ञात नहीं होता है कि कल्पसूत्र की इस प्रति की रचना कहाँ की गई, जबकि सन् १४३६ ई० और सन् १४६५ वाले कल्पसूत्रों में इनके रचनास्थल के नाम दिये गये हैं जो क्रमशः माण्डू[1] व जौनपुर में रचे गए। कागज पर काली स्याही से लिखे इसके पन्नों की नाप २६ × ११ से० मी० और इन पर बने चित्रों की नाप प्रायः ११ × ७ से ८ से० मी० है। पाठक की सुगमता के लिए लेखक ने प्रत्येक पन्ने के दाहिने और निचले कोने में काली स्याही से उनकी संख्या लिख दी है।

इस कल्पसूत्र में पद्मासनस्थ महावीर, अष्टमगल, इन्द्र द्वारा सिंहासन से उतरकर नमोकार उच्चारण, इन्द्र द्वारा हरिणगमेषिदेव को ब्राह्मणी देवानन्दा के गर्भ से भगवान महावीर के भ्रूणहरण के आदेश, त्रिशला द्वारा चौदह स्वप्नों का देखा जाना, राजा सिद्धार्थ द्वारा ज्योतिषियों से स्वप्नों का फल पूछना, त्रिशला रानी द्वारा शोक व हर्ष प्रदर्शन, महावीर जन्म (चित्र संख्या ३) महावीर का देवताओं द्वारा स्नान, इन्द्र को सूचना, महावीर की कौतुकपूर्ण क्रीड़ा, शिविका विमान पर सवार महावीर, महावीर द्वारा केशलुंचन, महावीर कैवल्यज्ञान (समवसरण), सिद्धार्थ शिला स्थित महावीर और उनके शिष्य गौतम, पार्श्व-जन्म, पार्श्व-दीक्षा, पार्श्व द्वारा पंचाग्नि तप का विरोध, अश्वारोही, जलप्लावन से धरणेन्द्र द्वारा पार्श्व रक्षा, पार्श्व-कैवल्य ज्ञान, पार्श्व-समवसरण, नेमिनाथ (अरिष्टनेमि) जन्म, अरिष्टनेमि द्वारा केशलुंचन, दीक्षा, विदेहक्षेत्र के बीस विहरमान, महावीर के एकादश गणधर, वीरसेन का पालन, गुरुशिष्य, जैनाचार्य द्वारा शिष्य को धार्मिक शिक्षा आदि आदि के तैंतीस चित्र हैं।

इनके अध्ययन से तत्कालीन सामाजिक स्थिति, रीति-रिवाजों, परम्परागत विश्वासों, धार्मिक विचारधाराओं, प्रकृति-चित्रण पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। जहाँ तक चित्रशैली का सम्बन्ध है, इस कल्पसूत्र को पश्चिमी भारतीय चित्रशैली की श्रेणी में अपभ्रंश कला शैली का प्रतिनिधि कहा जा सकता है जो सम्पूर्ण गुजरात, राजस्थान और उत्तर-प्रदेश, मध्यप्रदेश के कुछ भागों में ११वीं शती से लेकर १५वीं शताब्दी तक पनपी। इस क्षेत्र की परवर्ती कला-शैलियों ने इसी अपभ्रंश शैली की कुछ विशेषताओं को ग्रहण कर बाद में कुछ परिवर्तन कर अपना-अपना निजी रूप धारण किया। राजकीय संग्रहालय, जयपुर के इस कल्पसूत्र की कलात्मक तुलना प्रिंस आफ वैल्स म्युजियम, बम्बई के संग्रह के चित्रित कल्पसूत्र, कालकाचार्य कथा और उदयपुर के सरस्वती भवन संग्रह के चित्रित कल्पसूत्र (वि० सं० १५३६) से की सकती है। इन दोनों की भाँति इस कल्पसूत्र में भी नारी व पुरुष आकृतियों की नाक व ठुड्डी नुकीली है, धनुषाकार भौंहों के नीचे कनपटी तक विस्फारित नेत्र, दो में से एक पाली आँख, छंटी नुकीली दाढ़ी, तिलकयुक्त चौड़ा ललाट, रक्ताभ ओंठ और विशेषतया पुरुषों के उभरे मांसल वक्ष और नारी आकृतियों को सुन्दर वस्त्राभूषणों से युक्त चित्रित किया गया है।

इसकी रंगयोजना में पृष्ठभूमि लाल रंग की है, इसे राजस्थान के पारम्परिक कलाकार उस्ताद हिसामुद्दीन के शब्दों में "हिंगलू" भी कहा जा सकता, क्योंकि इसमें सिन्दूर की मिलावट है। इस रंग का निर्माण झरबेरी एवं पीपल की छाल और लाख मिलाकर किया जाता था। हांशियों की किनारी नीले रंग की है, जो किसी पत्ते से तैयार किया जाता था। पुरुषों व नारियों के पीले रंग को सोने के बारीक बर्क को चढ़ाकर बनाया है। यदि सुनहरा रंग होता तो भरे गये स्थानों में समता होती। बर्क के चढ़े होने से कहीं सुनहरा रंग है और कहीं उपड़ा हुआ प्रतीत होता है। सफेद रंग का प्रयोग आकृतियों की आँखों, वस्त्रों, आभूषणों तथा हंसों के चित्रण में हुआ है। इस रंग को 'शंख' या हड़ताल को फूँककर बनाया गया होगा। नीले रंग का प्रयोग चित्रों में रिक्त स्थान भरने, हाथी, घोड़े, मोर और पानी को दिखाने में हुआ है। काले रंग को रेखाओं, केश, भौंहों को रंगने के काम में लिया गया है। इस काले रंग

---

१. ललित कला सख्या ६ सन् १९५९ (देखिए कार्ल खण्डेलवाल और मोतीचन्द्र का 'ए कन्सीडरेशन आफ ऐन इलस्ट्रेटेड मेनुसक्रिप्ट फ्राम माण्डव दुर्ग सन् १४३९ ई०') केन्द्रीय संग्रहालय, जयपुर कल्पसूत्र चित्र रेखाकर्म और रंगयोजना की दृष्टि से माण्डू वाले कल्पसूत्र से कुछ निम्नस्तर के हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ने कहीं-कही कागज को खा लिया है, जिससे ऐसा प्रतीत होता है कि कालिख में सम्भवतः कशीस मिलाई गई होगी। इसी प्रकार मूँगिया, हरा रंग (सीलू) कई स्थानों पर कागज को खा गया है, यह खनिज रंग है जिसकी प्राप्ति कहाँ से हुई ? कहना कठिन है।

यशोधरचरित

सवाईमाधोपुर स्थित दीवानजी के मन्दिर में जैन तीर्थंकरों की लगभग ४५० पाषाण एवं कांस्य प्रतिमाएँ सुरक्षित हैं, परन्तु इनमें से अधिकांश प्रतिमाएँ विक्रम संवत् १८२६ की हैं। जैन पुरातत्त्व विषयक इससे पूर्व का एक 'यशोधरचरित' नामक चित्रित ग्रन्थ है, जो जयपुर के निकट सांगानेर कस्बे में वि० सं० १७६६ में चित्रित हुआ था, जैसा कि इसके निम्नलिखित प्रशस्ति पत्र से स्पष्ट है—

इति यशोधरचरित्रे भट्टारक श्री सकलकीर्ति विरचिते।
अभयरुचित भट्टारक स्वर्गगमन वर्णनोनामा अष्टम सर्गः सम्पूर्ण ॥

मिति संवत्सरे रंध्ररसमुनीन्द्र मिति १७६६ माघमासे शुक्लपक्षे पंचमी तिथि रेवती नक्षत्रे संग्रामपुर नगरे श्री नेमिनाथ चैत्यालये श्री मूलसंघे नंद्याम्नाय बलात्कारगण सरस्वती गच्छे.....॥

यशोधरचरित की इस चित्रित पाण्डुलिपि में ५६ पृष्ठ हैं जो आकार में लगभग १२' × ६" के होंगे और ३६ चित्र हैं, जिनमें से कुछ पूरे पृष्ठ पर और कुछ आधे पृष्ठों पर चित्रित हैं। रेखाकर्म व रंग योजना की दृष्टि से इसके चित्र सन् १७०६ ई०[1] के आमेर वाली रागमाला के चित्रों से निकट की समानता रखते हैं। इससे पूर्व की एक और यशोधरचरित्र की प्रति आमेर में सन् १५६० ई० में चित्रित हुई थी, सरयू दोशी के अध्ययन के आधार पर इस प्रति के चित्रों पर पश्चिमी भारतीय कला शैली का प्रभाव स्पष्ट है।

□□□

१. ललित कला, अंक १५ (श्रीधर आं), पृ० ४७-५१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org